

भारतीय मुद्रा प्रणाली की मुद्राशास्त्रीय यात्रा: एक अवलोकन

Ravi Prakash<sup>1\*</sup>, \*\*, Dr. Arvind Kumar Verma<sup>2</sup>

1. Research Scholar,

2. Professor and Head

\* Faculty of Social Science (Department of History), Purnea University, Purnea, Bihar, India

\*\*Faculty of Social Science (Department of History), Purnea University, Purnea, Bihar, India

Corresponding Author: Ravi Prakash

Email address:- Email- ravir.p358@gamil.com

**सारांश: मुद्राशास्त्र (Numismatics)** सिक्का प्रणाली के अध्ययन की एक विधा है, जो सिक्कों की भौतिक संरचना एवं उनके अभिलिखित तत्वों पर प्रकाश डालती है। परंतु, सिक्कों का अध्ययन केवल उनके रूप-निर्माण तक सीमित नहीं है; यह उस कालखंड की अर्थव्यवस्था के मौद्रिक स्वरूप, तकनीकी दक्षता, वाणिज्यिक गतिविधियों और आर्थिक क्षमता के विस्तृत बोध का माध्यम भी है।

यह शोध-पत्र प्राचीन भारत की मुद्रा प्रणाली की छठी शताब्दी ईसा-पूर्व से आठवीं शताब्दी ईस्वी तक की लगभग 1400 वर्षों की अवधि की मुद्राशास्त्रीय यात्रा का एक समग्र अवलोकन प्रस्तुत करता है। अध्ययन यह दर्शाता है कि प्राचीन भारत एक सशक्त और संगठित मौद्रिक व्यवस्था वाला समर्थ राष्ट्र था, जहाँ वैश्विक स्तर पर अन्य समकालीन साम्राज्यों के साथ सक्रिय अंतर्राष्ट्रीय व्यापार हुआ करता था।

मगध जनपद से लेकर गुप्त काल तक के शासनकाल, जिनकी विशेषता केवल भौगोलिक विस्तार ही नहीं बल्कि दीर्घकालीन स्थायित्व भी था, में सुव्यवस्थित मुद्रा प्रणाली और विशिष्ट रूप से डिज़ाइन की गई मुद्राएँ प्रचलित थीं। मौर्य काल में प्रायः रजत (चांदी) मुद्रा प्रचलित थी, जबकि गुप्त काल में स्वर्ण मुद्राओं का बोलबाला रहा। गुप्तकालीन स्वर्ण मुद्राओं के डिज़ाइन पर कुषाणों के आगमन के पश्चात् विदेशी प्रभाव भी दृष्टिगोचर होता है।

हालाँकि, कुछ कालखंड ऐसे भी रहे जब इन शक्तिशाली साम्राज्यों का प्रभाव क्षीण हुआ और स्थानीय तथा विदेशी शक्तियों ने प्राचीन भारत के विभिन्न क्षेत्रों पर नियंत्रण स्थापित कर लिया। इसने केवल प्रशासनिक और आर्थिक प्रणाली को ही प्रभावित नहीं किया, बल्कि मुद्रा प्रणाली को भी अव्यवस्थित किया।

यह मुद्राशास्त्रीय अध्ययन इस बात की पुष्टि करता है कि प्राचीन भारत की आर्थिक समृद्धि, विशेष रूप से वैश्विक स्तर पर, उसकी सुदृढ़ और परिष्कृत सिक्का प्रणाली में स्पष्ट रूप से परिलक्षित होती है।

[Prakash, R. and Verma, A.K. भारतीय मुद्रा प्रणाली की मुद्राशास्त्रीय यात्रा: एक अवलोकन. *The International Journal of Interpretation, Observation and Analysis*, 2025; Volume 3, Issue 1:84-91 (July-September). ISSN 2349-0713, Peer-reviewed (online/offline), Refereed, Indexed and International Journal (Since 2013), Global Impact Factor: 5.776

**Keywords (प्रमुख शब्द):** Ancient India - प्राचीन भारत, Commodity Money - वस्तु मुद्रा, Monetary System - मौद्रिक प्रणाली / मुद्रा प्रणाली, Numismatics - मुद्राशास्त्र

### I. परिचय

आधुनिक आर्थिक प्रणाली को परिभाषित करने वाला सबसे महत्वपूर्ण तत्व "मुद्रा" (Money) है। मुद्रा किसी भी अर्थव्यवस्था में वह साधन है जो विनिमय का माध्यम, मूल्य मापन की इकाई, स्थगित भुगतान का मानक, और श्रम मूल्य के भंडारण जैसे कार्यों को पूरा करता है। मुद्रा की अनुपस्थिति में अर्थव्यवस्था में लेन-देन में बाधाएँ उत्पन्न होती हैं, जो आर्थिक गतिविधियों की प्रगति और समाज के सदस्यों की सामान्य समृद्धि को प्रभावित करती हैं।

अंबेडकर (1923) ने अपने डॉक्टोरल शोध में कहा है कि:

“मुद्रा केवल वस्तु-विनिमय की कठिनाइयों को समाप्त कर व्यापार को सुगम बनाने हेतु ही आवश्यक नहीं है, बल्कि यह उत्पादन को बनाए रखने हेतु भी अनिवार्य है, क्योंकि यह विशेषीकरण (specialization) को संभव बनाती है।”

मुद्रा का विकास ऐतिहासिक रूप से वस्तु मुद्रा (Commodity Money) से प्रारंभ होकर फिएट मुद्रा (Fiat

Money) तक पहुँचा है, और यह इस पर निर्भर करता है कि उस समय समाज में किस प्रकार की आर्थिक सोच और आपसी सहमति प्रचलित थी, जिससे सुचारु आर्थिक लेन-देन संभव हो सके। विभिन्न सैद्धांतिक और प्रायोगिक अध्ययनों से यह स्पष्ट होता है कि किसी अर्थव्यवस्था में वास्तविक मुद्रा परिसंपत्तियाँ (real money balances), अन्य पारंपरिक संसाधनों को स्थिर रखते हुए, समग्र उत्पादन पर सकारात्मक प्रभाव डालती हैं (चार्ल्स, हर्बर्ट और रोनाल्ड, 1995)।

इतिहास में समाजों का विकास मुद्रा के रूपों के विकास के साथ निकटता से जुड़ा रहा है—जहाँ शुरुआत हुई वस्तु मुद्रा से, फिर आया धातु मुद्रा (Metallic Money) का दौर, जिसके बाद प्रतीकात्मक मुद्रा (Representative Money) और हालिया समय में फिएट मुद्रा का प्रचलन हुआ। आज जो गहरी आस्था फिएट मुद्रा में दिखाई देती है, वह अतीत में हुई घटनाओं और अनुभवों से उपजी है, जिन्होंने लोगों में "मुद्रा" की अवधारणा में विश्वास उत्पन्न किया।

**I. परिचय**

राजनीतिक लोकतंत्र की व्यवस्था में कानूनी संस्थाएँ जनता के लिए कार्य करती हैं, और ऐसी संस्थाओं की रचना भी जनता ही करती है ताकि सार्वजनिक इच्छा सभी पर प्रभावी रूप से लागू हो सके। इन संस्थाओं के आदेशों को समाज के प्रत्येक सदस्य द्वारा स्वीकार किया जाना अनिवार्य होता है। किसी भी राजनीतिक लोकतांत्रिक देश के संविधान द्वारा परिभाषित "सामूहिक हित (collective good)" ही वह मूल आधार होता है, जो समाज के सदस्यों को इन संस्थाओं के आदेशों का पालन करने के लिए प्रेरित करता है।

हालाँकि, फ्रांसीसी क्रांति (1789) से पूर्व तक विश्व इतिहास में राजनीतिक सत्ता का अधिकार अधिकांशतः वंशानुगत व्यवस्था (dynastic setup) द्वारा निर्धारित होता था, जहाँ सम्राट किसी विशेष परिवार या वंश से होता था। इस प्रकार की राजनीतिक संरचना में फिएट मुद्रा (Fiat Money) में जनता का विश्वास डगमगाया रहता था, क्योंकि यह शंका बनी रहती थी कि ये संस्थाएँ जनहित के बजाय शासक के परिवार के हित में काम कर सकती हैं। ऐसी परिस्थितियों में मुद्रा को लोगों का विश्वास प्राप्त करने हेतु आंतरिक मूल्य (intrinsic value) और प्रत्यक्ष विनिमय मूल्य (face value) दोनों ही आवश्यक थे — जो केवल वस्तु मुद्रा (commodity money) अथवा धातु मुद्रा (metallic money) के रूप में संभव था।

मुद्राशास्त्र (Numismatics) एक ऐसा शास्त्र है जो किसी समाज में प्रचलित सिक्कों और अन्य मुद्रा इकाइयों का वैज्ञानिक अध्ययन करता है। यह उन सिक्कों तथा सिक्का-सदृश वस्तुओं का अध्ययन है, जो मुद्रा या निकट मुद्रा (near money) की भूमिका निभाते हैं। "Numismatics" शब्द की उत्पत्ति लैटिन शब्द "Nomisma" से हुई है, जिसका अर्थ है "सिक्का"। मुद्राशास्त्र सिक्कों की भौतिक विशेषताओं, निर्माण तकनीक, और ऐतिहासिक संदर्भों का अध्ययन करता है।

चूँकि ऐतिहासिक रूप से सिक्के और मुद्राएँ औपचारिक आर्थिक ढाँचों के माध्यम से मुद्रा के रूप में प्रकट हुए हैं, अतः उनका अध्ययन शासकों की मौद्रिक स्थिरता के प्रति चिंता और आर्थिक गतिविधियों के सुचारु संचालन के प्रति उनके दृष्टिकोण को उजागर करता है। यह भी दर्शाता है कि किसी शासक की दृष्टि में उसके राज्य के नागरिकों की आर्थिक समृद्धि कितनी महत्वपूर्ण थी।

ऐतिहासिक प्रमाण दर्शाते हैं कि मौर्य काल में भारत का वैश्विक सकल घरेलू उत्पाद (GDP) में 32 प्रतिशत योगदान था (सेन, 2022)। सेन लिखते हैं:

"250 ई.पू. में अपने चरम पर मौर्य साम्राज्य विश्व का सबसे समृद्ध और विशालतम साम्राज्य था, जिसकी सीमाएँ आज के भारत के अधिकांश भाग, पाकिस्तान, अफगानिस्तान और ईरान की सीमा तक विस्तृत थीं।"

ऐसी अद्वितीय आर्थिक समृद्धि संभव नहीं होती यदि भारत में उस समय सिक्कों और मुद्रा पर आधारित एक उन्नत मौद्रिक प्रणाली विकसित न हुई होती। हालाँकि, मौर्य काल से अब तक सिक्का एवं मुद्रा प्रणाली में अनेक बदलाव एवं रूपांतरण हुए हैं। हम यह भी देख चुके हैं कि समय के साथ भारत की वैश्विक अर्थव्यवस्था में हिस्सेदारी में गिरावट आई है। वर्तमान में भारत का वैश्विक GDP में हिस्सा लगभग 3.54 प्रतिशत है और वह 5वें स्थान पर है, जबकि अमेरिका (25.43%) और चीन (18.34%) शीर्ष दो स्थानों पर हैं (IMF, 2023)।

यह शोध-पत्र प्राचीन भारत की सिक्का और मुद्रा प्रणाली के विकास को पाँच प्रमुख चरणों में प्रस्तुत करेगा। कुल चार खंडों में विभाजित यह अध्ययन —

- प्रथम खंड (वर्तमान) में प्रस्तावना दी गई है,
- दूसरा खंड मुद्राशास्त्र के विभिन्न पक्षों और आर्थिक इतिहास में इसकी प्रासंगिकता को प्रस्तुत करता है,
- तीसरा खंड छठी शताब्दी ई.पू. से आठवीं शताब्दी ई. तक के प्राचीन भारत की मुद्रा प्रणाली पर केंद्रित है, जिसमें स्थानीय एवं विदेशी दोनों प्रकार के राजवंशों की भूमिका रही,
- चौथा खंड निष्कर्ष प्रस्तुत करता है।

यह अध्ययन एक अन्वेषणात्मक (exploratory) प्रकृति का है, जो उपलब्ध द्वितीयक स्रोतों और ऐतिहासिक दस्तावेजों पर आधारित होगा।

**II. मुद्राशास्त्र एवं आर्थिक इतिहास में इसकी प्रासंगिकता**  
जैसा कि ज्ञात है, मुद्राशास्त्र (Numismatics) किसी भी सभ्यता की सिक्का प्रणाली का अध्ययन करता है, अतः यह उस सभ्यता के आर्थिक पक्षों की व्यवस्थित समझ को भी समाहित करता है। भांडारकर (1921) का मत है कि मुद्राशास्त्र केवल इतिहास की पुष्टि करता है, उसे संशोधित नहीं करता — यह टिप्पणी पश्चिमी देशों के संदर्भ में उपयुक्त हो सकती है, किंतु भारत के संदर्भ में मुद्राशास्त्र, शिलालेख विज्ञान (Epigraphy) की भाँति कार्य करता है और यह इतिहास की केवल पुष्टि करने वाला स्रोत नहीं, बल्कि इतिहास निर्माण का एक मूल आधार बन जाता है।

भांडारकर (1921) के अनुसार, जस्टिन और स्ट्राबो जैसे लेखकों की जानकारी के अनुसार इंडो-यूनानी (Indo-Bactrian Greek) शासन के केवल चार से पाँच राजकुमारों का उल्लेख मिलता है, जिनका शासनकाल लगभग आधी सदी तक माना गया है। लेकिन जब हम उस काल के सिक्कों का अध्ययन करते हैं, तो यह पता चलता है कि उस शासन काल में लगभग सैंतीस यूनानी राजकुमारों ने शासन किया और उनकी शासन अवधि ढाई शताब्दी तक विस्तृत थी।

इसी प्रकार, इंडो-शक (Indo-Scythian) शासकों के अस्तित्व का क्रमिक विवरण भी उनके सिक्कों के माध्यम से ही ज्ञात हो पाया है, क्योंकि अन्य किसी ऐतिहासिक स्रोत में उनका उल्लेख नहीं है। 'क्षत्रप' जैसे शासकों के अस्तित्व का भी ज्ञान

हमें उनके सिक्कों के माध्यम से ही हुआ है। 'क्षत्रप' शब्द का अर्थ भूमि का "रक्षक" या "राज्यपाल" के रूप में किया जा सकता है।

मुद्राशास्त्र न केवल शासकों की संख्या को उद्धाटित करता है, बल्कि उनके प्रशासनिक पदक्रम (administrative hierarchy), भौगोलिक क्षेत्र, और धन-संपदा व समृद्धि के स्तर को भी प्रकट करता है। यही कारण है कि मुद्राशास्त्र की बहु-आयामी प्रकृति के कारण विभिन्न विषयों के विद्वान इसकी ओर आकर्षित होते हैं:

- इतिहासकार ऐतिहासिक घटनाओं के अध्ययन हेतु मुद्राशास्त्र का प्रयोग करते हैं।
- पुरातत्त्वविद् विभिन्न स्थलों या परतों की पुष्टि हेतु सिक्कों का सहारा लेते हैं।
- कलाविद् सिक्कों की कला से उस समय की चित्रांकन, मूर्तिकला और प्रतीकों की शैली को समझते हैं।
- वैज्ञानिक सिक्कों में प्रयुक्त धातुओं की दुर्लभता और वैज्ञानिक प्रकृति का अध्ययन करते हैं।
- और अर्थशास्त्री, मुद्राशास्त्र के माध्यम से अतीत की आर्थिक व्यवस्थाओं, मूल्य संरचना, मौद्रिक आपूर्ति, तथा राष्ट्रीय व अंतरराष्ट्रीय आर्थिक एकीकरण को समझने का प्रयास करते हैं।

इस प्रकार, मुद्राशास्त्र न केवल इतिहास की पुष्टि करने वाला स्रोत है, बल्कि समग्र सामाजिक-आर्थिक परिप्रेक्ष्य को उद्धाटित करने का एक सशक्त माध्यम भी है।

### III. प्राचीन भारत में मुद्राशास्त्र: वैश्विक व्यापार, तकनीक और मुद्रा की परिकल्पना

मुद्राशास्त्र (Numismatics) विश्व के विभिन्न क्षेत्रों के बीच व्यापारिक संबंधों को समझने में एक अत्यंत महत्वपूर्ण पहलू रहा है। प्राचीन भारत में विभिन्न विदेशी मूल के सिक्कों का प्राप्त होना इस बात का प्रमाण है कि भारत का अन्य सभ्यताओं के साथ व्यापक व्यापारिक लेन-देन था। विशेषतः दक्षिण भारत में बड़ी संख्या में रोमन सिक्के प्राप्त हुए हैं और कुछ सिक्के उत्तर भारत में भी पाए गए हैं। ये सिक्के रोमन व्यापारियों द्वारा भारतीय वस्तुओं की खरीदारी के लिए भारत लाए गए थे।

प्राचीन भारत में, विशेष रूप से सशक्त राजवंशों के काल में व्यापार अत्यंत समृद्ध था, और यह संभव हो सका था एक सुदृढ़ और सुविनियमित मुद्रा प्रणाली के कारण, जिसमें सिक्कों की शुद्धता उच्च स्तर की थी। आज भारतीय मुद्रा और विकसित देशों की मुद्राओं की क्रय शक्ति (Purchasing Power) में बड़ा अंतर देखने को मिलता है, परंतु मौर्य या गुप्त साम्राज्य के काल में भारतीय सिक्कों की शुद्धता यूनानी सिक्कों के समतुल्य थी। यही कारण था कि प्राचीन भारत की आर्थिक सफलता संभव हो सकी।

मुद्राशास्त्र यह भी दर्शाता है कि उस समय वैश्विक आर्थिक एकीकरण किस हद तक प्रभावी था। भारत और पश्चिम के सिक्कों की डिज़ाइन, प्रतीक और लेखांकन शैली में उल्लेखनीय समानता देखी जाती है। ग्रीको-रोमन सभ्यता के सिक्कों पर प्रयुक्त प्रतीक, चित्र और अभिलेखों की तकनीक को भारतीय राजवंशों ने अपनाया जिससे भारतीय सिक्का प्रणाली को एक वैश्विक सभ्यता-सदृश विशेषता प्राप्त हुई (मुखर्जी एवं ली, 1988)।

चूंकि मुद्राशास्त्र का विषय सिक्कों का अध्ययन है, अतः "सिक्का" की परिभाषा स्पष्ट करना आवश्यक है। सिक्का प्रायः एक निश्चित भार की धातु होती है, जिसे एक वैध प्राधिकरण द्वारा मुद्रांकन (minting) कर लेन-देन हेतु कानूनी प्रतीक (Legal Token) के रूप में स्थापित किया जाता है। यह अधिकार प्रायः उस शासकीय संस्था का होता है जो सिक्के पर अपनी महर, राजचिह्न, राजा या देवी-देवता की छवि, या जनजातीय प्रतीक अंकित करती है। इसी प्राधिकरण द्वारा सिक्कों पर अभिलेख (Legend) भी अंकित कराए जाते हैं, जो राजा के उपाधियाँ, धार्मिक संदेश, वंश का नाम, या क्षेत्रीय पहचान दर्शाते हैं।

जहाँ तक धात्विक सामग्री और भार का संबंध है, यह क्षेत्रीय परंपराओं और व्यापारिक मान्यताओं के अनुसार तय होता था। चूंकि शासकीय प्राधिकरण को यह विशेषाधिकार प्राप्त था कि वे सिक्कों पर क्या अंकित करें, अतः सिक्के राजनीतिक, धार्मिक और सांस्कृतिक विचारों के प्रचार का माध्यम भी बनते थे। इस प्रकार, सिक्कों के माध्यम से हम उस शासक वर्ग की विचारधारा को समझ सकते हैं जिसने उन्हें जारी किया।

सिक्कों की प्रमुख भौतिक विशेषताएँ इस प्रकार हैं:

**A. फ्लान (Flan):**  
सिक्के की सतह को 'फ्लान' कहते हैं। यह उस साँचे के आकार पर आधारित होता है, जिससे सिक्का ढाला जाता है। यदि फ्लान छोटा हो तो अभिलेख अपूर्ण रह सकता है, और यदि बड़ा हो तो कुछ खाली स्थान छूट सकता है।

**B. अग्रपृष्ठ (Obverse):**  
सिक्के की मुख्य सतह, जिस पर आमतौर पर राजा की छवि या शाही विवरण अंकित होता है।

**C. पश्चपृष्ठ (Reverse):**  
यह अग्रपृष्ठ का विपरीत भाग होता है। यहाँ कोई प्रतीकात्मक चित्र या आकृति होती है, जिसकी महत्ता अग्रपृष्ठ से कुछ कम मानी जाती है।

**D. मोटिफ़ (Motif):**  
सिक्कों पर अंकित आकृति या प्रतीक, जैसे पशु, पौधे, देवी-देवता, आदि।

**E. डिवाइस (Device):**  
वह प्रतीक जिसमें कोई ध्येय वाक्य (motto) या अभिलेख शामिल हो।

**F. अभिलेख (Legend):**

सिक्के पर लिखा गया पाठ। जब कोई राजा अपने पिता का नाम या किसी धर्म-संबंधी संदेश को जनता तक पहुँचाना चाहता था, तब वह इसे सिक्कों पर अंकित कराता था। उदाहरणस्वरूप, मुगल शासक किसी जीव की आकृति अंकित नहीं करवाते थे, इसलिए वे सिक्कों पर अपने पूर्वजों के नाम या धार्मिक संदेशों का अभिलेख लिखवाते थे।

#### C. पश्चपृष्ठ (Reverse):

यह सिक्के का वह भाग होता है जो अग्रपृष्ठ (Obverse) के विपरीत होता है। आमतौर पर इस भाग पर अंकित प्रतीकों की महत्ता अग्रपृष्ठ की तुलना में कम मानी जाती है (चित्र 1 देखें)।

#### D. मोटिफ़ (Motif):

सिक्कों पर डिज़ाइन की गई आकृतियाँ या प्रतीक, जिन्हें सजावटी अथवा प्रतीकात्मक उद्देश्यों से दर्शाया जाता है।

#### E. डिवाइस (Device):

वह प्रतीक जिसमें कोई ध्येय वाक्य (motto) या अभिलेख (legend) सम्मिलित होता है, उसे डिवाइस कहा जाता है।

#### F. अभिलेख (Legend):

सिक्के पर लिखा गया पाठ या लेख। यह परंपरा तब प्रारंभ हुई जब किसी राजा ने अपने पिता का नाम या जनसंदेश सिक्कों पर अंकित करवाना चाहा। यह विशेष रूप से तब महत्वपूर्ण हो गया जब मुगल शासक किसी भी जीवित प्राणी का चित्र या प्रतीक सिक्कों पर अंकित नहीं करवाना चाहते थे। अतः उन्होंने सिक्कों पर अपने पूर्वजों के नाम अथवा धार्मिक दृष्टिकोण से प्रेरित संदेशों को लेखबद्ध करवाया।



#### G. फैब्रिक (Fabric):

सिक्के के डिज़ाइनर की तकनीकी क्षमता और कलात्मक कौशल के आधार पर सिक्के की बाहरी भौतिक बनावट और आकार को 'फैब्रिक' कहा जाता है। जैसे-जैसे मानव सभ्यता का विकास हुआ, वैसे-वैसे सिक्कों के फैब्रिक में भी परिवर्तन देखने को मिलता है। सामान्यतः सिक्कों के साँचे (dies) कांस्य (bronze) और लोहा (iron) से बनाए जाते थे।

#### H. डाई (Die):

यह एक धातु का टुकड़ा होता है जिसमें सिक्के के अग्रपृष्ठ और पश्चपृष्ठ की आकृति उलटी (negative engraving) की जाती है। एक सिक्के को ढालने के लिए सामान्यतः दो डाई (ऊपरी और निचली) का प्रयोग किया जाता है।

#### I. डाई स्ट्राइकिंग (Die Striking):

जब किसी पुराने या पहले से मौजूद सिक्के पर नई डिज़ाइन या अभिलेख को अंकित किया जाता है, तो इस प्रक्रिया को डाई स्ट्राइकिंग कहा जाता है।

J. किनारा (Edge): सिक्के के अग्रपृष्ठ की लंबवत सतह को 'किनारा' कहा जाता है। कई सिक्कों के किनारों पर चित्र, डिज़ाइन या अक्षर भी अंकित किए जाते थे, ताकि नकली सिक्कों (counterfeiting) को रोका या कम किया जा सके।

#### K. संग्रह (Hoard):

यह एक सिक्कों का समूह होता है, जिसे पुरातात्विक उत्खननों

के माध्यम से विश्व के विभिन्न भागों में खोजा गया है। ये संग्रह प्राचीन काल की संग्रहीत अथवा छिपाई गई संपत्ति को उजागर करते हैं।

#### L. पंच-चिह्नित सिक्के (Punch Marked Coins):

ये वे सिक्के थे जो प्राचीन भारत के प्रारंभिक काल में प्रचलन में थे। इन्हें चाँदी, सोना, तांबा आदि धातुओं के टुकड़ों को छेदकर (पंच करके) बनाया जाता था। प्रत्येक पंच (चिह्न) एक अलग-अलग मुहर से अंकित किया जाता था।

#### III. प्राचीन भारत में मुद्राशास्त्र एवं मौद्रिक प्रणाली

सिंधु घाटी सभ्यता, जिसकी तिथि लगभग 2700 ईसा पूर्व मानी जाती है, दुनिया की सबसे समृद्ध और विकसित प्राचीन सभ्यताओं में से एक रही है। यह सभ्यता गंगा घाटी तक और आगे मालवा क्षेत्र तक विस्तृत थी। इस काल की बस्तियाँ अपने समय की अन्य किसी भी सभ्यता की तुलना में विस्तृत और सुव्यवस्थित थीं।

यहाँ के घरों में कच्ची ईंटों का प्रयोग होता था और अधिकतर घरों में आंगन, रसोईघर और शयनकक्ष की विशेषता होती थी। इन नगरों की जलनिकासी और सीवर प्रणाली उस समय के रोम से भी अधिक उन्नत मानी जाती है। (मजूमदार, 1952) गहने, वस्त्र, रसोई के बर्तन, फर्नीचर, दीपक और अनेक दैनिक उपभोग की वस्तुएँ, जो आज भी आम हैं, उस समय की समाज में उपलब्ध थीं। सिंधु घाटी सभ्यता के बारे में मुख्य

पुरातात्विक साक्ष्य 19वीं शताब्दी में मोहनजोदड़ो (जिला लरकाना, सिंध) की खुदाई के दौरान प्राप्त हुए।

इस सभ्यता से प्राप्त मूहरों (Seals) पर चित्रलिपि (Pictographic Script) अंकित थी, जिन्हें मुद्रा के रूप में उपयोग में लाए जाने की संभावना व्यक्त की जाती है (जैन, 2017)।

इसके बाद वैदिक काल में प्राप्त साक्ष्य बताते हैं कि उस समय निष्क (Nishka), सुवर्ण (Suvarna), शतमान (Shatamana), पाद (Pada) आदि सोने की इकाइयाँ उपहार लेन-देन के लिए प्रयोग की जाती थीं, यद्यपि इनका भौतिक साक्ष्य आधुनिक वैज्ञानिक इतिहासलेखन की दृष्टि से अनुपलब्ध है।

प्राचीन भारत में वास्तविक सिक्कों के प्रमाण, जो मौद्रिक प्रणाली के ठोस साक्ष्य माने जा सकते हैं, 6वीं शताब्दी ईसा पूर्व से मिलते हैं। यह सिक्के मुख्यतः पंच-चिह्नित सिक्के थे। पंच-चिह्नित सिक्के वे सिक्के होते हैं जिन्हें धातु (जैसे चाँदी) को क्षार युक्त पिघलन बर्तनों में पिघलाकर, फिर उसे पिटाई करके चादर के रूप में फैलाया जाता था। बाद में इसे इच्छित आकार में काटकर उसके ऊपर अलग-अलग चिहनों (Punches) से मुहर लगाई जाती थी।

डी. डी. कोसंबी (1981) के अनुसार, इन सिक्कों के अध्ययन से यह स्पष्ट होता है कि कोई भी दो पंच-चिह्नित सिक्के एक जैसे नहीं थे। हर सिक्के में अंकित चिहनों में विविधता पाई जाती है। ये सिक्के प्रायः चाँदी के बने होते थे, और अग्रपृष्ठ (Obverse) पर आमतौर पर पाँच चिह्न अंकित होते थे, जबकि पश्चपृष्ठ (Reverse) प्रायः रिक्त रहता था या उस पर 1 से 16 तक चिह्न पाए जाते थे (चित्र 2 देखें)।

भारत के विभिन्न क्षेत्रों से प्राप्त सिक्का-संग्रहों (hoards) के आधार पर यह प्रमाणित किया जा सकता है कि 6वीं शताब्दी ईसा पूर्व से भारत में संगठित मौद्रिक प्रणाली विद्यमान थी। इस ऐतिहासिक काल (6वीं शताब्दी ईसा पूर्व से 8वीं शताब्दी ईस्वी तक) को निम्नलिखित उप-कालों में विभाजित किया जा सकता है:

प्राचीन भारत में मुद्राशास्त्र के कालखंड

- जनपद काल (600 ई.पू. – 320 ई.पू.)
- मौर्य काल (319 ई.पू. – 187 ई.पू.)
- उत्तर-मौर्य काल (186 ई.पू. – 300 ई.)
- गुप्त काल (301 ई. – 500 ई.)
- उत्तर-गुप्त काल (501 ई. – 800 ई.)

प्राचीन भारत की समयावधि और भौगोलिक विस्तार को ध्यान में रखते हुए, हम आगे उपर्युक्त प्रत्येक कालखंड के मुद्राशास्त्रीय स्वरूप का पृथक-पृथक रूप से विश्लेषण करेंगे।

जनपद काल (600 ई.पू. – 320 ई.पू.) में मुद्राशास्त्र

वैदिक काल के उत्तरार्ध में जन-सामान्य की निष्ठा जनजातीय संगठनों (tribal organizations) से हटकर राजनैतिक-भौगोलिक इकाइयों (politico-geographical units) की

ओर स्थानांतरित होने लगी (सराओ, 2014)। इस परिवर्तन के फलस्वरूप एक ऐसे सामाजिक-पॉलिटिकल ढांचे का उदय हुआ जिसमें राजा और प्रजा के बीच पारस्परिक संबंध (reciprocity) पर आधारित व्यवस्था विकसित हुई।

इस शक्ति-संरचना की प्रणाली ने छठी शताब्दी ईसा पूर्व के मध्य तक राजनीतिक जनपदों (Janapadas) के उद्भव का मार्ग प्रशस्त किया। इन जनपदों की सीमाएँ स्पष्ट रूप से परिभाषित थीं और उनके केंद्र नगरों (cities) के रूप में विकसित हुए थे।

कुछ जनपद इतने शक्तिशाली हुए कि वे महाजनपदों (Mahajanapadas) में परिवर्तित हो गए, जहाँ अक्सर एक से अधिक राजनीतिक सत्ता केंद्र विद्यमान रहते थे।

ऐसे महाजनपदों की विशेषता थी कि वहाँ एक कानूनी और वैचारिक ढांचा स्थापित था, जिसमें स्पष्ट जाति व्यवस्था, आर्थिक दायित्व, और सामाजिक प्रतिबंधों की व्यवस्था मौजूद थी। इस प्रकार की शासन प्रणाली एक पेशेवर सेना तथा एक प्रशासनिक तंत्र के माध्यम से संचालित होती थी, जिसका कार्य कर संग्रह करना और विभिन्न अपराधों को दंडित करना था।

प्रारंभ में यह प्रशासनिक व्यवस्था गंगा घाटी के मध्य क्षेत्र में विकसित हुई, परंतु शीघ्र ही यह समस्त भारतवर्ष में फैल गई। जनपदों या महाजनपदों के राजा का यह कर्तव्य था कि वह कानून और व्यवस्था बनाए रखे। इसके लिए राजस्व (revenue) एकत्र करना आवश्यक था, और राजा को जनता की कुल उपज का छठा भाग (one-sixth) एकत्र करने का अधिकार प्राप्त था।

पाली साहित्य के जातक ग्रंथों में जिन महाजनपदों की चर्चा मिलती है, वे इसी काल से संबंधित हैं। इन ग्रंथों में वेतन (Vetana = मजदूरी/वेतन), दोनमापक (Donamapaka = माप-तौल अधिकारी), रसिक (Rasika = राजस्व) जैसे शब्दों का प्रयोग मिलता है, जो तत्कालीन आर्थिक संगठन को दर्शाते हैं।

इस समय भारत में लगभग सोलह महाजनपद अस्तित्व में थे। उन सभी में मगध महाजनपद सबसे प्रमुख था, जो उस समय का सक्रिय वाणिज्यिक और राजनीतिक केंद्र था और जिसने कई अंतर्राष्ट्रीय आगंतुकों को अपनी ओर आकर्षित किया।

मगध की राजधानी प्रारंभ में राजगृह (वर्तमान राजगीर) थी, जिसे बाद में स्थानांतरित कर पाटलिपुत्र (वर्तमान पटना) बना दिया गया। आगे चलकर मगध पर मौर्य और गुप्त वंशों का शासन रहा।

मगध महाजनपद के प्रमुख शासक थे:

- बिंबिसार (540–492 ई.पू.)
- अजातशत्रु (492–462 ई.पू.)
- इसके बाद शिशुनाग (440–400 ई.पू.), जिन्होंने अवंती महाजनपद को मगध में मिलाकर क्षेत्र का विस्तार किया।

- इसके बाद नंद वंश (364–321 ई.पू.) का उदय हुआ।

मगध महाजनपद में वस्तुओं का उत्पादन, स्थानीय व्यापार और पश्चिमी देशों के साथ अंतरराष्ट्रीय व्यापार में वृद्धि हुई। यही व्यापार ही था, जिसने मुद्रा (Money) की उत्पत्ति की आवश्यकता को जन्म दिया।

मगध में प्रचलित सिक्के:

- ये सिक्के चाँदी के बने होते थे।
- ये समान वजन और रूप-रेखा (fabric) में होते थे।
- ये केवल मगध में ही नहीं बल्कि अन्य सभी महाजनपदों में भी प्रचलित थे।
- ये सिक्के विभिन्न मूल्यवर्गों (denominations) में उपलब्ध थे और इसलिए सामान्य दैनिक लेन-देन के लिए भी उपयोग में लाए जाते थे (जैन, 2017)।
- मगध के सिक्कों में विशेष रूप से कर्षापण (Karshapana) उल्लेखनीय हैं, जिनका भार लगभग 3.4 ग्राम से 3.5 ग्राम होता था। इससे यह स्पष्ट होता है कि चाँदी के सिक्कों में भार की एकरूपता (uniformity) सुनिश्चित की गई थी। इन सिक्कों पर पाँच पंच-चिह्न (punch marks) अंकित होते थे, जिनमें से सूर्य चिह्न (Sun symbol) और छः भुजाओं वाला आकृति-चिह्न (six-armed shape) तो सभी सिक्कों पर स्थायी रूप से पाए जाते थे, जबकि शेष तीन चिह्नों में परिवर्तनीयता (variation) पाई जाती थी (चित्र 4, 5 और 6 देखें)।
- जैसा कि आधुनिक मौद्रिक सिद्धांतों (modern monetary theories) से ज्ञात होता है, मुद्रा के

निम्नलिखित भौतिक गुण (physical characteristics) होने चाहिए:

- a) वहनशीलता (Portability)
- b) विभाज्यता (Divisibility)
- c) टिकाऊपन (Durability)
- d) मान्यता प्राप्त मूल्य (Recognizable value)
- इन मानदंडों के आधार पर देखा जाए तो मगध महाजनपद के सिक्के इन सभी गुणों को पूर्णतः निभाते थे। पंचचिह्नों की प्रणाली ने न केवल सिक्के को सहज पहचान योग्य (recognizable) बनाया बल्कि इसने हर सिक्के पर राजकीय प्रामाणिकता (state authority) भी सुनिश्चित की।
- चूँकि ये सिक्के चाँदी के बने होते थे, अतः इनकी टिकाऊ प्रकृति (durability) भी स्पष्ट थी। इस प्रकार के मापदंडों के आधार पर कहा जा सकता है कि मगध की ये मुद्राएँ विनिमय के माध्यम (medium of exchange) के रूप में अत्यंत प्रभावी सिद्ध हुईं, और उन्होंने आर्थिक गतिविधियों के विकास में महत्वपूर्ण योगदान दिया।

बिंबिसार, अजातशत्रु और शिशुनाग के अधीन मगध वंश ने जिस दीर्घकालीन अवधि और विस्तृत भौगोलिक क्षेत्र पर शासन किया, उस दौरान उन्होंने निर्गत सिक्कों की पूर्ण सार्वभौमिकता (perfect sovereignty) सुनिश्चित की। इन सिक्कों का प्रयोग न केवल मगध की सीमाओं के भीतर, बल्कि मगध की सीमाओं से बाहर के लेन-देन में भी व्यापक रूप से होता था।



(a)

Note: Silver Bent-bar (Shatamana), 6th-3rd century BC, Weight: 11.53 gm



(b)



(a)

Note: Silver 1/4 Shatamana, 6th-3rd century BC, Weight: 2.77 gm



(b)

Note: Silver 1/8 Shatamana, 6th-3rd century BC, Weight: 1.31 gm

## प्राचीन भारत

का एक अन्य महत्वपूर्ण महाजनपद था गांधार, जो उत्तर-पश्चिम भारत में स्थित था और जिसका विस्तार काबुल से भारतीय पंजाब तक फैला हुआ था। इसकी राजधानी तक्षशिला थी, जो अपने समय की महान तक्षशिला विश्वविद्यालय के लिए प्रसिद्ध थी।

यह महाजनपद राजा पक्कुसाती (Pikkusati) द्वारा शासित था, जो भगवान बुद्ध के समकालीन माने जाते हैं। मगध महाजनपद और गांधार जनपद के बीच निरंतर वस्तुओं और मूल्यों का आवागमन कर-मुक्त रूप से (without any tariff) होता था (सराओ, 2014)।

हालांकि, छठी शताब्दी ईसा पूर्व के किसी समय पर गांधार पर फ़ारसी सम्राट दारायवहुष (Darius) ने आक्रमण कर उसे अपने अधीन कर लिया था। 520 ई.पू. की एक अभिलेखीय सूचना में दारायवहुष ने गांधार को सबसे समृद्ध महाजनपदों में से एक बताया है।

इस काल के सिक्के बेंट-बार प्रकार (bent-bar type) के थे, जो चाँदी के बने होते थे और पूर्व-कर्षापण शृंखला (pre-Karshapana series) से संबंधित माने जाते हैं। चित्र 7 (a और b) में दर्शाए अनुसार, सिक्के के अग्रभाग (obverse) पर दो पुष्प-पंखुड़ियों जैसे पंच-चिह्न अंकित होते थे, जबकि पृष्ठ भाग (reverse) पर कोई चिह्न नहीं होता था।

इस प्रकार के चाँदी के सिक्कों से यह स्पष्ट होता है कि जनपद काल में भी अर्थव्यवस्था का मौद्रिकरण (monetization) हो चुका था, और उसमें स्वरूप, आकार और निर्माण में एकरूपता के साथ सुनियोजित मुद्राओं की उपस्थिति थी।

जैसा कि इस खंड में दो प्रमुख महाजनपदों—मगध और गांधार—के उदाहरणों द्वारा प्राचीन भारत में चाँदी के सिक्कों के रूप में मुद्रा की उपस्थिति के ऐतिहासिक प्रमाण प्रस्तुत किए गए हैं, वैसे ही 600 ई.पू. से 320 ई.पू. के बीच अन्य महाजनपदों में भी ऐसी ही प्रवृत्तियाँ (trends) पाई जाती हैं। मुद्रा की उपस्थिति, और उसमें निहित भौतिक गुणों को ध्यान में रखते हुए यह निष्कर्ष निकाला जा सकता है कि प्राचीन भारत आर्थिक रूप से अत्यंत समृद्ध था और वहाँ की आर्थिक गतिविधियाँ सुव्यवस्थित मौद्रिक प्रणाली से सुचारु रूप से संचालित होती थीं।

## IV. निष्कर्ष

इस शोधपत्र में यह परिभाषित किया गया है कि मुद्रा क्या होती है, इसके क्या उपयोग हैं और इसमें कौन-कौन से भौतिक गुण होने चाहिए। एक ऐतिहासिक तथ्य यह भी है कि प्राचीन भारत में भारत का वैश्विक GDP में हिस्सा लगभग 32.9 प्रतिशत तक था। आर्थिक गतिविधियों में मुद्रा की भूमिका को देखते हुए यह अपेक्षित है कि प्राचीन भारत की मौद्रिक प्रणाली (monetary system) उस समय की मानक प्रणाली के अनुरूप विकसित रही होगी और किसी भी समृद्ध सभ्यता के समकक्ष रही होगी।

मुद्राशास्त्र (Numismatics), जो कि सिक्कों की वैज्ञानिक अध्ययन विधा है, किसी समाज या आर्थिक प्रणाली की मौद्रिक व्यवस्था के विकास की अवस्था को दर्शाता है। इस शोध में भारत में मुद्राशास्त्रीय साक्ष्यों और साहित्य की पड़ताल की गई और पाया गया कि छठी शताब्दी ईसा पूर्व से ही भारत की मौद्रिक प्रणाली निरंतर प्रगति पर रही है।

मगध महाजनपद, छठी से तीसरी शताब्दी ईसा पूर्व के दौरान एक प्रमुख शक्ति था, जिसने स्वदेशी मौद्रिक अवधारणाओं पर आधारित सिक्का प्रणाली के माध्यम से भारत को आर्थिक सुदृढ़ता प्रदान की। यह व्यवस्था आगे चलकर मौर्य साम्राज्य (तीसरी से दूसरी शताब्दी ईसा पूर्व) द्वारा और अधिक सुदृढ़ की गई। हालांकि दूसरी शताब्दी ईसा पूर्व से तीसरी शताब्दी तक कुछ अस्थिरता रही, परंतु इसके बाद गुप्त वंश जैसे स्वदेशी शासकों का पुनः उदय हुआ, जिन्होंने भारत को उसका "स्वर्ण युग" प्रदान किया।

परंतु गुप्त साम्राज्य के पतन के बाद अनेक क्षेत्रीय वंशों का उदय हुआ, जो संगठित आर्थिक और प्रशासनिक ढांचे को बनाए रखने में असफल रहे। इससे भारत में सामंतवाद का प्रसार हुआ और नगरीय जीवन का ह्रास हुआ, जिसके परिणामस्वरूप वैश्विक स्तर पर भारत की GDP में गिरावट आई।

यह तथ्य अंगस मैडिसन (Angus Maddison) द्वारा अपनी पुस्तक *The World Economy: A Millennial Perspective* में दिए गए आँकड़ों से प्रमाणित होता है। मैडिसन के अनुसार, प्रथम शताब्दी में भारत की वैश्विक GDP में हिस्सेदारी 32.9 प्रतिशत थी, जो 1000 ईस्वी तक घटकर 28.9 प्रतिशत रह गई।

यह स्पष्ट करता है कि प्रशासनिक स्थिरता, आर्थिक व्यवस्था की निरंतर प्रगति हेतु अत्यंत आवश्यक है। मुद्रा, जो मौद्रिक स्थिरता का प्रमुख उपकरण है, आर्थिक लेनदेन को सुचारु रूप से संचालित करने में सहायक होती है। अतः, हमें प्राचीन भारत की मौद्रिक प्रणाली से यह सीख लेनी चाहिए कि किस प्रकार एक सुव्यवस्थित मुद्रा प्रणाली ने न केवल लेनदेन के लिए एक स्थिर माध्यम प्रदान किया, बल्कि उसे मूल्य मापन की इकाई, मूल्य संचय का माध्यम, तथा स्थगित भुगतान का मानक भी बनाया।

यहाँ तक कि गुप्तोत्तर काल के शासकों ने भी गुप्तकालीन मुद्राओं की स्थायित्व और गुणवत्ता को स्वीकार करते हुए उन्हें जारी रखा — यह स्वयं इस बात का प्रमाण है कि प्राचीन भारत की मौद्रिक व्यवस्था कितनी उन्नत और प्रभावशाली थी।

## संदर्भ सूची (References)

1. आंबेडकर, बी. आर. (1923) – *द प्रॉब्लम्स ऑफ़ द रुपी: इट्स ओरिजिन एंड इट्स सॉल्यूशन*, पी. एस. किंग एंड सन्स लिमिटेड, लंदन।

2. भांडारकर, डी. आर. (1921) – *लेक्चर्स ऑन एंशिपेंट इंडियन न्यूमिज़मैटिक्स*, कलकत्ता यूनिवर्सिटी प्रेस, कलकत्ता।
3. डेलोर्म, सी. डी., थॉम्पसन, एच. जी., और वॉरेन, आर. एस. (1995) – "मनी एंड प्रोडक्शन: अ स्टोकास्टिक फ्रंटियर अप्रोच", *जर्नल ऑफ प्रोडक्टिविटी एनालिसिस*, 6(4), पृ. 333-342।
4. जैन, रेखा (2017) – *एंशिपेंट इंडियन कॉइन*, डी. के. प्रिंटवर्ल्ड (प्रा.) लिमिटेड, दिल्ली।
5. मजूमदार, आर. सी. (1952) – *प्राचीन भारत*, मोतीलाल बनारसीदास प्रकाशन, दिल्ली।
6. कोसांबी, डी. डी. (1981) – *इंडियन न्यूमिज़मैटिक्स*, ओरिएंट लॉन्गमैन, नई दिल्ली।
7. मैती, एस. के. (1970) – *अर्ली इंडियन कॉइन्स एंड करंसी सिस्टम*, मंशीराम मनोहरलाल, नई दिल्ली।
8. मुखर्जी, बी. एन. और ली, पी. के. डी. (1988) – *टेक्नोलॉजी ऑफ इंडियन कॉइनएज*, द इंडियन म्यूज़ियम, कलकत्ता।
9. सराओ, के. टी. एस. (2014) – "जनपद, महाजनपद, राज्य और गणराज्य", *दिलीप के. चक्रवर्ती और मख्खन लाल (संपादित), द टेक्स्ट, पॉलिटिकल हिस्ट्री एंड एडमिनिस्ट्रेशन टिल सी. 200 बीसी*, प्राचीन भारत का इतिहास शृंखला-III, विवेकानंद इंटरनेशनल फाउंडेशन, नई दिल्ली।
10. शर्मा, रामशरण (1965) – *इंडियन फ्यूडलिज़्म*, कलकत्ता विश्वविद्यालय।
11. सेन, कॉलर टेलर (2022) – *अशोक एंड मौर्य डायनेस्टी: द हिस्ट्री एंड लेगेसी ऑफ एंशिपेंट इंडिया'स ग्रेटेस्ट एम्पायर*, स्पीकिंग टाइगर्स बुक्स, दिल्ली।
12. अंतर्राष्ट्रीय मुद्रा कोष (2023) – *विश्व आर्थिक दृष्टिकोण*, वॉशिंगटन डीसी।
13. टाइम्स ऑफ इंडिया (26 अगस्त, 2008) – "India to reclaim Mughal-age Economic Aura", उपलब्ध: <https://timesofindia.indiatimes.com/business/india-business/india-to-reclaim-mughal-age-economic-aura/articleshow/3408144.cms>
14. वेबसाइट – कॉइन इंडिया: <https://coinindia.com/home.html>



INTERNATIONAL JOURNAL OF  
INTERPRETATION  
OBSERVATION & ANALYSIS